जैन एवं वर्तमान शिक्षा व्यवस्था का तुलनात्मक अध्ययन

डॉ0 भूपेन्द्र कुमार यादव
असिस्टेन्ट प्रोफेसर, शिक्षाशास्त्र विभाग
महाराज बलवन्त सिंह पी0जी0 कालेज गंगापुर वाराणसी

मनुष्य एक चिन्तनशील प्राणी है। जब वह विचार करना प्रारम्भ करता है तब दर्शन का प्रारम्भ होता है। व्यक्ति जिस वातावरण में रहता है उसे वह जाने का प्रयत्न करता है और उसके मन में यह जिज्ञासा होती है कि वह गतिशील जगत के लक्ष्य का पता लगाये।

'दर्शन' शब्द की निष्पत्ति संस्कृत भाषा के 'दृश' धातु से हुई है, जिसका अर्थ है 'देखना'। दर्शन को उपनिषद में परिभाषित किया गया है कि 'दृश्यते अनने इति दर्शनम' अर्थात् 'जिसके द्वारा देखा जाये वह दर्शन है।' भारतीय दर्शन में–तत्व के प्रकट स्वरूप का अवलोकन करना, अर्थात् ब्रह्म के भाव को उसके यथार्थ स्वरूप का सम्यक् ज्ञान ही दर्शन कहलाता है।

दर्शन के लिए प्रयुक्त अंग्रेजी शब्द 'फिलॉसफी' ग्रीक भाषा के दो शब्द 'फिलॉस' और 'साँफिया' से बना है, जिसका संयुक्त अर्थ बुद्धि का प्रेम या बुद्धि ज्ञान के प्रति प्रेम है।

डॉ0 राधाकृष्णन ने दर्शन को परिभाषित करते हुए कहा है ''दर्शन यथार्थ के स्वरूप का तार्किक विवेचन है।''

शिक्षा एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा व्यक्ति या बालक का बौद्धिक, सामाजिक, सांस्कृतिक तथा आध्यात्मिक विकास होता है। यह उसके जीवन को सफल बनाती तथा उसके विचार व्यवहार एवं दृष्टिकोण में ऐसा परिवर्द्धन परिवर्तन लाती है को वह समाज, देश और विश्व के लिए कल्याणकारी हो।

दर्शन व शिक्षा में घनिष्ट सम्बंध है। दर्शन में मानव जीवन के अन्तिम उद्देश्यों तथा उनकी प्राप्ति के उपायों पर विचार किया जाता है और शिक्षा व्यक्ति के आचार विचारों में परिवर्तन करती है, तथा नये ज्ञान की खोज करने के लिए अवलोकन, परीक्षण चिन्तन और मनन आदि शक्तियों का विकास करती हैं, फलतः ज्ञान और कौशल के आधार पर दर्शन का पुनः निर्माण होता है। इस प्रकार नई शिक्षा के नये दर्शन को जन्म देती है और नया दर्शन नयी शिक्षा को जन्म देता है। दोनों एक दूसरे के पूरक एवं दूसरे पर आधारित होते हैं, क्योंकि एक सैद्धान्तिक है तो दूसरा व्यवहारिक।

दार्शनिक सिद्धान्तों को व्यावहारिकता का रूप, शिक्षा द्वारा ही प्राप्त होता है। शिक्षा और दर्शन एक–दूसरे के सहायक है।

भारतीय दार्शनिक चिन्तनों में जैन चिन्तन धारा इस देश की सांस्कृतिक परम्पराओं में समाहित हो गयी और आज भी इस चिन्तन में विश्वास रखने वाले तथा उसके अनुरूप जीवन व्यतीत करने वाले इस देश में लाखों की संख्या में विद्यमान है। अतः जैन शिक्षादर्शन का विवेचन तथा वर्तमान शिक्षा व्यवस्था से तुलना करना युक्ति–युक्त होगा।

शोध के उद्देश्य :–

1- जैन शिक्षा दर्शन के स्वरूप का ज्ञान प्राप्त करना।
2- जैन शिक्षण व्यवस्था को स्पष्ट करना।
3- वर्तमान भारतीय शिक्षा व्यवस्था पर प्रकाश डालना।
4- जैन शिक्षा व्यवस्था और वर्तमान भारतीय शिक्षा व्यवस्था की तुलना करना।
5- जैन शिक्षण व्यवस्था के आधार पर वर्तमान शिक्षा के लिए उपयोगी सुझाव प्रस्तुत करना।

परिकल्पना :–

1- जैन शिक्षा दर्शन का स्वरूप सुविचारित होगा।
2- जैन शिक्षक व्यवस्था जैन शिक्षा दर्शन के आधार पर नियोजित होगी।
3- वर्तमान भारतीय शिक्षा व्यवस्था व्यक्ति समाज एवं राष्ट्र की आवश्यकता के परिप्रेक्ष्य में व्यवस्थित होने की ओर अग्रसर होगी।

4- जैन शिक्षण व्यवस्था और वर्तमान भारतीय शिक्षा व्यवस्था में कतिपय विन्दुओं को लेकर तुलना की जा सकेगी।

5- जैन शिक्षण व्यवस्था और वर्तमान भारतीय शिक्षा व्यवस्था में कतिपय समानताएं और असमानताएं होगी।

6- जैन शिक्षक व्यवस्था वर्तमान भारतीय शिक्षा के लिए उपयोगी होगी।

शोध–विधि :–

प्रस्तुत शोध विषय भूत से संबंधित है, जिसकी विषय सामग्री अपरिवर्तनीय भूतकालीन परिधि में हैं, किन्तु वर्तमान भारतीय शिक्षा व्यवस्था के साथ तुलना की दृष्टि से इसका विषय वर्तमान के साथ जुड़ा है। इसलिए प्रस्तुत विषय को ऐतिहासिक एवं वर्णनात्मक अध्ययन के अन्तर्गत रखा गया है। अतः शोधार्थी ने ऐतिहासिक एवं वर्णनात्क विधि का प्रयोग किया है।

जैन शिक्षा व्यवस्था :–

जैन शिक्षा मूल–भूत रूप से मोक्ष मूलक थी, किन्तु उसका उद्देश्य सम्यक दर्शन सम्यक चरित्र एवं सम्यक ज्ञान के द्वारा समग्र विकास करना था। जैन शिक्षा निवृत्ति मूलक होने पर भी शिक्षा के विभिन्न विषयों में जीव और जगत को केन्द्र रखकर सम्पूर्ण प्राणी जगत से सभी विषयों को समाहित किया था। साहित्यों के अध्ययन से यह ज्ञात होता है कि मनुष्य विद्वता से कुलिनता, धन सम्पत्ति, मान्यता, सम्पर्क शीलता और समादर को प्राप्त करता है, जो मानव जीवन के लिए प्रतिष्ठा पूर्ण होती है। इनमें यह भी स्वीकार किया गया है कि विद्वत्ता लौकिक प्रयोजन के साथ–साथ मोक्ष का मार्ग भी प्रशस्त करती है। जैन वांगमय में गुरू को महत्वपूर्ण स्थान था, इनके लिए परमेष्ठी शब्द का प्रयोग किया गया था तथा इनके पाँच प्रकार बतलाये गये थे, जिनमें उपाध्याय को शिक्षा का अधिष्ठाता माना गया है। इससे स्पष्ट हो जाता है कि शिक्षाचार्य के रूप में उपाध्याय ही अधिष्ठाता कहलाते थे। जिसको शैक्षिक व्यवस्था के संचालन का सम्पूर्ण अधिकार प्राप्त था। जैनाचार्यों ने विद्यार्थी की योग्यता के लिए उसका आचार्य कुल में रहना, उत्साही, विद्याप्रेमी, मधुर भाषी तथा शुभ कर्मों का होना बतलाया है। गुरू–शिष्य का संबंध बहुत मधुर था।

जैन शिक्षा पद्धति में 16 प्रकार की शिक्षण विधियों का प्रयोग किया गया था। शिक्षा के माध्यम के विषय में किसी भाषा विषय पर कोई विशेष आग्रह नहीं दिखलाई पड़ता है। विश्व के इतिहास में जैनाचार्य ही पहले शिक्षाशास्त्रीय थे, जिन्होंने मातृभाषा और लोक भाषा को शिक्षा के माध्यम के रूप में स्वीकार किया था। जैन शिक्षा में अध्यापन के अतिरिक्त स्व अध्ययन पर भी अधिक बल दिया गया है। इस शिक्षा पद्धति में भी अपरिग्रह का प्रभाव था, जिसके कारण ग्रन्थ लेखन–प्रकाशन की पद्धति का विकास नहीं हुआ था, क्योंकि जैनाचार्य शिष्य और शास्त्र के प्रति मोह ग्रस्त नहीं होना चाहते थे। इस शिक्षा पद्धति में ब्रह्मचर्य, नैतिकता और अहिंसा पर विशेष जोर दिया गया था। उनकी यह मान्यता थी की चरित्र की साधना पर अधिक बल देने से कोई कुमार्गी नहीं बन सकता है।

प्रबोधक शिक्षा पद्धति (Monitorial System of Education) जैन शिक्षा की देन है। इस पद्धति का प्रयोग अपने देश के साथ–साथ यूरोपीय देशों में भी सफल प्रभावित हुआ। जैनचार्यों ने अपने आचरण और व्यक्तित्व से अपने छात्रों को इतना अधिक प्रभावित किया था कि उन्हें शारीरिक दण्ड देने की आवश्यकता नहीं पड़ती थी।

नारी के क्षेत्र में जैन धर्म को विश्व के इतिहास में अग्रणी स्थान प्राप्त है और उसने पुरूषों की तरह ही नारियों को भी शिक्षा प्राप्त करने का समान अधिकार दिया गया था तथा इनके पाठ्यक्रम में अनेक ललित कलाओं को सम्मिलित किया गया था। सभी तीर्थकरों की प्रमुख आर्थिकाओं ने आचार्यों के उपदेश फैलाने के अतिरिक्त अन्य ग्रन्थों का प्रणयन और प्रति लेखन का भी कार्य किया था।

जैन शिक्षा में विद्यार्थी का आचार्य कुल में निवास करना, उत्साही, परिश्रमी, मधुरभाषी और शुभ कार्य करना एवं अनुशासित होना आवश्यक था। अनुशासन हीनता पर इन्हें दण्ड दिया जाता था। जैन शिक्षा का प्रारम्भ परिवार से होता था। महावीर स्वामी संस्कारोपरांत 'लेखशाला' में प्रवेश किया।

वर्तमान शिक्षा व्यवस्था –

वर्तमान भारतीय शिक्षा का स्वरूप प्राथमिक, माध्यमिक और उच्च शिक्षा में व्यवस्थित किया गया है, तथा शिक्षा का उद्देश्य व्यक्तिगत एवं सामाजिक, राजनैतिक, चारित्रिक, आध्यात्मिक, आर्थिक, संवेगात्मक गुणों का विकास निर्धारित किया गया है। आधुनिक वैज्ञानिक युग ने अनेक मनोवैज्ञानिक शिक्षण विधियों जैसे– खेल विधि, करके सीखने की विधि, कार्य अनुभव विधि, अनुसंधान विधि, प्रयोग विधि, तर्क विधि, पर्यटन विधि, आगमन–निगमन विधि निरीक्षण विधि आदि को महत्वपूर्ण स्थान प्रदान किया है। राधाकृष्णन आयोग ने पाठ्यक्रम को साध्य के स्थान पर साधन के रूप में स्वीकार किया है। इसका निर्धारण रूचियों योग्यताओं, आवश्यकता, उपयोगिता, व्यावहारिकता विविधता, लचीला आदि सिद्धान्तों के आधार पर किया गया है तथा अनुसंधान कार्यो को विशेष महत्व दिया गया है। आज शिक्षा मातृ या प्रादेशिक भाषा, राष्ट्रभाषा, संस्कृत भाषा एवं विदेशी जैसे– अंग्रेजी, अरबी, फारसी भाषा के माध्यम से दी जा रही है। अध्यापक को प्रशिक्षित, कर्तव्यपरायण, पथप्रदर्शक विषय का ज्ञाता, नियमित, अनुशासित, सदाचारी, सहुष्णता युक्त होना चाहिए परन्तु आज ये अर्थयुग से प्रभावित है और शिक्षा को एक व्यवसाय के रूप में स्वीकार करते हैं। आज की शिक्षा बाल केन्द्रित है बालक स्वयं शिक्षक के निर्देशन में जिज्ञासु होकर ज्ञान प्राप्त कर रहे है। शिक्षक एवं छात्र दोनों परस्पर मित्रवत,पुत्रवत स्नेह से आवद्ध है। आज शिक्षा के सभी स्तरों के लिए विभिन्न प्रकार की शिक्षण संस्थाएं, विश्वविद्यालय स्थापित की गयी है। जिसमें कुछ सरकारी तथा कुछ निजी है। आज विद्यालयों के नियमों का पालन करना ही अनुशासन तक सीमित रह गया है। वर्तमान समय में नारियों को पुरूषों की भाँति शिक्षा एवं विकास का समान अवसर प्रदान किया गया है वे अन्तरक्षि से लेकर भूगर्भ तक, तकनीकी विज्ञान, सैन्य विज्ञान, जनसंरक्षण, प्रशासनिक समाज सुधार मार्गदर्शन, शिक्षा आदि क्षेत्रों में उत्कर्ष को प्राप्त कर चुकी है।

जैन शिक्षा व्यवस्था एवं वर्तमान शिक्षा व्यवस्था की तुलना :–

समानता

1. दोनों शिक्षा पद्धतियाँ शिक्षक की योग्यता, चरित्र, व्यक्तित्व को लेकर समान विचार रखती है। उनकी यह मान्यता है कि शिक्षक के योग्य होने के साथ–साथ आचारणवान भी होना चाहिए।
2. जैन शिक्षा पद्धति एवं वर्तमान शिक्षा पद्धति शिक्षा ग्रहण में लिंगगत, जातिगत, वर्णगत भेद स्वीकार नहीं करती है। दोनों शिक्षा पद्धतियाँ में सार्वभौमिक शिक्षा पर बल दिया गया है।
3. दोनों शिक्षा पद्धतियों में नैतिक शिक्षा को आवश्यक समझा गया है तथा इसको व्यक्ति अनुशासन, समाज अनुशासन और राष्ट्र अनुशासन के लिये आवश्यक माना गया है।
4. वर्तमान शिक्षा पद्धति में जैन शिक्षा पद्धति की तरह दण्डात्मक अनुशासन को नाकारात्मक स्वीकार किया गया है।
5. दोनों शिक्षा पद्धतियों में स्त्रियों की शिक्षा पर विशेष बल दिया गया है तथा सह–शिक्षा (स्त्री व पुरूष) प्रणाली को स्वीकार किया गया है।

असमानताएं :–

1. वर्तमान शिक्षा पद्धति की अपेक्षा जैन शिक्षा पद्धति में आचार्यों को अधिक महत्व दिया जाता था।
2. जैन शिक्षा व्यवस्था धर्म प्रधान थी जबकि वर्तमान शिक्षा में किसी विशेष धर्म को स्थान नहीं दिया गया है।
3. जैन शिक्षा व्यवस्था में वयस्क विद्यार्थी के लिए सचल विद्यालयों की व्यवस्था थी, जबकि वर्तमान शिक्षा में वयस्कों के लिए स्थिर महाविद्यालयों और विश्वविद्यालयों की व्यवस्था की गयी है।
4. जैन शिक्षा पद्धति के स्त्रियों को समानता का अधिकार प्राप्त होने पर भी दृष्टिवाद की शिक्षा नही दी जाती थी, जबकि वर्तमान शिक्षा में स्त्रियों के लिए किसी भी प्रकार की शिक्षा प्राप्त करने से वंचित नहीं किया जाता है।
5. जैन शिक्षा पद्धति में वर्तमान शिक्षा व्यवस्था की तरह बड़े–बड़े शिक्षा केन्द्रों या विश्वविद्यालयों की स्थापना नहीं की गयी थी।
6. जैन शिक्षा पद्धति में निषिद्ध कार्यों के करने पर व्यक्ति को हमेशा के निष्कासित कर दिया जाता था जबकि वर्तमान शिक्षा व्यवस्था में इतने कठोर नियम नही बनाये गये हैं। पुनः प्रवेश मिल जाता है।

उपर्युक्त तथ्यों से स्पष्ट होता है कि जैन शिक्षा दर्शन, वर्तमान शिक्षा एवं समाज हेतु आज भी उपयोगी है, किन्तु इस बात की आवश्यकता है कि उन मान्यताओं को लेकर बदले हुए परिवेश, सामाजिक व्यवस्था और शैक्षिक व्यवथा के अनुरूप परिवर्तन एवं परिर्वधन भी आवश्यक है यदि समसामयिक परिवर्तनों के साथ जैन शिक्षा की मान्यताओं में परिवर्तन करके स्वीकार किया जाय तो हमारे लिए वह आज भी उपयोगी सिद्ध हो सकती है।

सन्दर्भ ग्रन्थ :–

1. अटूट, श्री कृष्ण दत्त :– जैन धर्म क्या है ? सर्व सेवा–संघ प्रकाशन, राजघाट, वाराणसी
2. ओड़ लक्ष्मीलाल :– 'शिक्षा के दार्शनिक आधार' राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर, 1982.
3. कुमार, विजय :– 'जैन एवं बौद्ध शिक्षा दर्शन एक तुलनात्मक अध्ययन' प्रकाशक, पार्श्वनाथ विद्यापीठ, वाराणसी
4. पाण्डेय राम सकल :– 'भारत में शिक्षा व्यवस्था का विकास' अग्रवाल पब्लिकेशन आगरा 2012
5. घासी लालजीः– 'भगवती सूत्र' जैन शास्त्रोंद्वार समिति 1971.
6. सहवी चन्दनाः– 'उत्तराध्ययन सूत्र' वीरायतन प्रकाशन आगरा 1972.
7. राय पारसनाथ :–'अनुसंधान परिचय', लक्ष्मी नारायण पब्लिकेशन, आगरा, 2010
8. सारस्वत मालती :–'भारतीय शिक्षा का इतिहास' आलोक प्रकाशन, इलाहाबाद, 2010
9. शर्मा निशानन्द :– जैन वांगमय में शिक्षा के तत्व प्रकृत, जैन शास्त्र और अहिसं, शोध संस्थान वैशाली (बिहार) 1988.